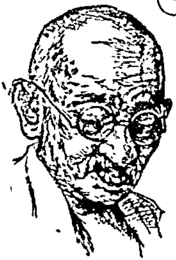

महात्मा गांधी

सत्यकाम विद्यालंकार

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

KEXAMS

मूल्य : एक रुपया

© राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

MAHATMA GANDHI by Satyakam Vidyalankar

Biography Re. 1·00

२२६
चौताभिया

6268

क्रम

जन्म और शिक्षा	५
बाल गांधी के निर्मल आंसू	७
विलायत में ऊंची शिक्षा	९
दक्षिण अफ्रीका को प्रस्थान	१२
एक घटनापूर्णयात्रा	१३
खून के प्यासे गोरे	१५
बोअर-युद्ध में सेवा कार्य	१७
दक्षिण अफ्रीका कासत्याग्रह	१८
ब्रह्मचर्य का व्रत	२१
दूध और नमक का त्याग	२२
स्वदेश आगमन	२५
आश्रम की स्थापना	२७
मजदूरों के लिए उपवास	२८
विश्व-युद्ध का आरम्भ	३९
सत्याग्रह की योजना	३०
हिमालय जैसी भूल	३३
कांग्रेस में प्रवेश	३५
भारत में पहली जेलयात्रा	३८
राष्ट्रपति के पद पर	४०

भारत में दूसरा सत्याग्रह ४१
कम्यूनल अवार्ड के विरुद्ध अनशन ४२
हरिजन-सेवा ४४
महायुद्ध के बाद ४५
नोआखाली-यात्रा ४७
महाप्रयाण ४८
क्षमा बड़े को चाहिए ५०
नम्रता ५२
मैं अभी विद्यार्थी हूं! ५५
सादा जीवन, उच्च विचार ५७
बापू के गुरु ५९
बापू की सीख ६०
बापू के बोल ६२

जन्म और शिक्षा

गांधीजी के पिता राजकोट के मन्त्री थे। किन्तु उन्हें धन जोड़ने का लोभ नहीं था। इसीलिए इतने ऊंचे ओहदे पर होकर भी वे अमीर नहीं थे। आपकी माताजी बड़ी साध्वी थीं। पूजा-पाठ किए बिना भोजन नहीं करती थीं। उपवास की महिमा का ज्ञान गांधीजी को माताजी से ही मिला था।

इस धर्मपरायण माता-पिता के घर आश्विन वदी १२, संवत् १९२५, अर्थात् २ अक्तूबर, १८६९ ईस्वी को पोरबन्दर में गांधीजी का जन्म हुआ।

बालक गांधी

बचपन पोरबन्दर में ही बीता। गांधीजी बचपन में बहुत संकोची स्वभाव के बालक थे। घंटी बजते ही स्कूल पहुंच जाते और स्कूल बन्द होते ही घर भाग आते। उन्हे किसी से मिलने में डर लगता था कि कहीं कोई उनका मज़ाक न उड़ाए।

गांधीजी बचपन से ही

सत्यनिष्ठ थे। माता-पिता के संस्कारों ने उन्हें पहले ही धर्मात्मा बना दिया था। सचाई के प्रति यह प्रेम जो बचपन से आपकी नस-नस में समा गया था, जो आजीवन आपका साथी रहा। बचपन की शिक्षाओं का प्रभाव स्थायी होता है। जिन दिनों आप हाई स्कूल में पढ़ते थे, शहर में एक नाटक कम्पनी आई। नाटक राजा हरिश्चन्द्र का था। नाटक देखने के बाद गांधीजी को स्वप्नों में भी राजा हरिश्चन्द्र ही दिखाई देते थे। जीवन में आप सत्य की बदौलत ही विजय पाते रहे।

गांधीजी हरिश्चन्द्र की दृढ़ता से बहुत प्रभावित हुए। हरिश्चन्द्र की विजय ने उन्हें विश्वास दिला दिया कि सत्य की विजय अटल है। गांधीजी ने कई बार इसी कहानी को मन ही मन दुहराया। अन्त में उन्होंने भी निश्चय कर लिया कि वह सत्य का साथ कभी न छोड़ेंगे। सत्य के मार्ग में आने वाली कठिनाइयाँ उन्हें पग-भर पीछे नहीं हटा सकेंगी।

गांधीजी जब तक जीवित रहे, सत्य का पालन करते रहे। उन्होंने सत्य को यहां तक अपनाया कि उसके पुजारी बन गए। उन्होंने सत्य के असली रूप को पहचाना। इसी सत्य की धुन ने उन्हें आत्म-

विश्वास और दृढ़ता दो। गांधीजी ने जीवन-भर इसी सत्य का उपदेश दिया। वे कहते हैं—

"साधारण रूप में सत्य का अर्थ केवल सच बोलना ही समझा जाता है। परन्तु सत्य का विशाल रूप विचार, वाणी और आचरण तीनों में फैला हुआ है। हम सचाई की बात सोचें, सच्ची बात कहें और सच्ची बात करें। सत्य के न होने पर हमारे जीवन में रह ही क्या जाता है? सत्य तो परमात्मा का रूप है। बुरा काम अथवा बुरा विचार असत्य है। यह सदा मनुष्य को नीचे की ओर ढकेलता है। अतः हमें किसी भी हालत में, चाहे कितनी भी रुकावटें क्यों न आएं, सत्य को नही छोड़ना चाहिए।"

बाल-गांधी के निर्मल आंसू

इस सत्यप्रियता ने आपको अनेक बार पाप के गर्त में गिरने से बचाया। कुसंगति में पड़कर आपने एक बार भाई का कर्ज़ा चुकाने के लिए एक तोला सोना चुरा लिया था। कर्ज़ा तो निपट गया, किन्तु अन्तरात्मा पश्चात्ताप की आग में जलने लगी। सोचा, पिताजी के सामने दोष स्वीकार कर लें, किन्तु जबान नहीं खुली।

अन्त में उन्होंने एक चिट्ठी पिताजी के लिए लिखी, जिसमें उन्होंने स्वयं अपना अपराध स्वीकार किया था। गांधीजी ने सारी की सारी बात उसमें साफ-साफ लिख दो और प्रतिज्ञा की कि वे भविष्य में कभी भी ऐसा अपराध न करेंगे। गांधीजी ने इस भूल को स्वीकार किया।

पत्र पढ़ते ही पिता की आंखें भर आईं। गांधीजी भी खूब रोए। गांधीजी को डर था कि पिताजी उनका दोष जानकर क्षमा नहीं करेंगे। वे स्वभाव से उदार और सत्यप्रिय थे, किन्तु क्रोधी थे। फिर भी उन्होंने गांधीजी द्वारा स्वयं दोष स्वीकार करने के बाद उन्हें हृदय से क्षमा कर दिया। तभी से गांधीजी ने यह शिक्षा ली कि प्रायश्चित्त का सबसे अच्छा उपाय शुद्ध हृदय से दोष स्वीकार कर लेना है।

पिताजी के आंसुओं में गांधीजी की सभी कमजोरियां उसी तरह बह गईं जिस तरह गंगा के निर्मल प्रवाह में ज़मीन का कूड़ा-कर्कट बह जाता है। पन्द्रह वर्ष की उम्र में ही गांधीजी का हृदय निर्मल हो गया था। उनकी अग्नि-परीक्षा हो चुकी थी। इसका श्रेय उनके धर्मपरायण पिताजी को है। अपनी आत्म-कथा लिखते समय गांधीजी ने चोरी के लिए

'अस्तेय' शब्द का प्रयोग किया है। चोरी को वे पाप कहते हैं। उन्होंने स्वयं अपने उपदेशों में कहा है—

"हम सब थोड़ी-बहुत चोरी जाने-अनजाने करते हैं। दूसरे की चीज़ को बिना आज्ञा ले लेना चोरी है। मनुष्य कभी-कभी अपनी चीज़ की भी चोरी करता है। जैसे—बच्चे को जताए बिना कोई बाप गुपचुप कोई चीज खा ले। आश्रम का भण्डार हमारा अपना है, पर उसमें से एक गुड़ की डली लेनेवाला भी चोर है। किसी की कलम लेकर लिखने वाला लड़का भी चोर है। यहां तक कि राह में पड़ी समझकर ली गई चीज भी चोरी की चीज है। सड़क पर पड़ी चीज के आप स्वामी नहीं, बल्कि वहां की सरकार स्वामी है। उसमें भी चोरी है। इसलिए चोरी छोटी हो या बड़ी, उससे बचना चाहिए।"

विलायत में ऊंची शिक्षा

गांधीजी जब सोलह वर्ष के थे, उनके पिताजी का देहान्त हो गया। उनकी पीढ़ियों से चली आई दीवानगीरी की गद्दी को संभालने के लिए गांधीजी को विलायत जाने की शिक्षा देना उनके कुटुम्बियों ने

आवश्यक समझा। गांधीजी भी विलायत जाने की इच्छा रखते थे। किन्तु माताजी को डर था कि लड़का विलायत जाकर मांस और शराब के चक्कर में फंस जाएगा। तब गांधीजी ने प्रतिज्ञा की कि वे विलायत जाकर मांस, मदिरा और स्त्री से दूर रहेंगे। इसपर माताजी से आपको जाने की आज्ञा मिल गई।

४ सितम्बर, १८८८ को बम्बई के बन्दरगाह से जहाज़ विदा हुआ। रास्ते में मांसाहारी न होने के कारण आपको बहुत कष्ट रहा, किन्तु प्रतिज्ञा नहीं तोड़ी। अभी आपको छुरी-कांटे से खाना नहीं आता था। अंग्रेज़ी में बात करने का भी अभ्यास नहीं था। अंग्रेज़ी कपड़े पहनने की तरकीब से भी अपरिचित थे। फिर भी आप अपनी सहज शिष्टता के कारण सबके प्रिय बन गए थे। लन्दन पहुंचकर पहले विक्टोरिया होटल में ठहरे। होटल के संकीर्ण कमरे में आपका मन नहीं लगा। बड़े परेशान-से रहने लगे। अपना देश याद आने लगा। घर की बातें याद आतीं। मां का प्यार याद आता। रात-भर रोते-रोते गुज़ारते।

होटल से निकलकर आप एक अंग्रेज़ परिवार के साथ रहे। वहीं आपने अंग्रेज़ी रीति-रिवाज सीखे। अंग्रेज़ी में बातचीत करने की आदत भी डाली। अंग्रेज़ी

सभ्यता सीखने का भी यत्न किया। किसी ने कहा कि नाचना अंग्रेज़ी सभ्यता का आवश्यक अंग है। नाचना सीखने के लिए भी आप एक स्कूल में भर्ती हुए। किन्तु माता को दी हुई प्रतिज्ञा ने आपको अंग्रेज़ी सभ्यता के प्रवाह में बहने से रोक दिया। सभ्य बनने की सनक शीघ्र ही समाप्त हो गई। आपको निश्चय हो गया कि अपने सदाचार से ही मनुष्य सभ्य बन सकता है। शेष बातें तो केवल आडम्बर है।

अब आपका झुकाव सादगी की ओर हुआ। तब मसालों का भी खाना छोड़ दिया। चाय और कॉफी का भी परित्याग कर दिया। रोटी और उबली हुई सब्ज़ी पर ही गुज़र करने लगे।

विलायत में परीक्षा की तैयारी करते हुए आप धर्मग्रन्थों का भी अध्ययन करने लगे। गीता का अंग्रेजी अनुवाद पढने के बाद आपको गीता पर बड़ी श्रद्धा हुई। उन दिनों गीता के श्लोक ही आपके कानों में गूंजा करते थे। गीता के प्रति यह भावना आपके साथ आजीवन रही।

उन्हीं दिनों आपने एक ईसाई सज्जन की प्रेरणा पर बाइबल पढ़ी। बाइबल का यह वाक्य कि 'जो तेरे दाहिने गाल पर थप्पड़ मारे उसके आगे बायां गाल

कर दे,' आपके जीवन का पथप्रदर्शक बन गया।

दक्षिण अफ्रीका को प्रस्थान

तीन साल के अथक परिश्रम के बाद गांधीजी १० जून, १८९१ में बैरिस्टर बन गए। १२ जून को आप हिन्दुस्तान के लिए चल पड़े। यहां आकर आपको माताजी के स्वर्गवास का समाचार मिला। गांधीजी ने लिखा है, "पिताजी की मृत्यु से अधिक आघात मुझे माता जी की मृत्यु से पहुंचा।" किन्तु इस समाचार को सुनकर आप रोए नहीं, कामकाज में लगे रहे।

बैरिस्टर गांधी

राजकोट में वकालत करते हुए अभी आपको अधिक समय नहीं हुआ था कि दक्षिण अफ्रीका का बुलावा आ गया। पोरबन्दर की एक बड़ी कम्पनी

'अब्दुल्ला एण्ड कम्पनी' ने दक्षिण अफ्रीका के एक सौदागर से चालीस हजार पौण्ड लेने थे। दोनों में झगड़ा चल रहा था। आप 'अब्दुल्ला एण्ड कम्पनी' की ओर से वकालत करने के लिए दक्षिण अफ्रीका रवाना हो गए।

यहां से आपने जीवन के कार्यक्षेत्र में प्रवेश किया। अभी तक आप केवल विद्यार्थी थे। अब व्यवसायी बन गए। व्यवसाय में प्रवेश करते ही आपको नई-नई समस्याओं का सामना करना पड़ गया। बचपन के संस्कारों ने आपको असाधारण बना दिया था। यह असाधारणता पग-पग पर प्रकट होने लगी।

एक घटनापूर्ण यात्रा

अदालत में पहुंचे तो मजिस्ट्रेट ने कहा, "अपनी पगड़ी उतार लो।"

आपने इन्कार कर दिया और बाहर चले गए।

यह घटना अखबारों में निकल गई। इसकी खूब चर्चा हुई। किसी ने आपके पक्ष का समर्थन किया, किसी ने इसे उद्दण्डता कहा। बात तो छोटी ही थी किन्तु प्रसिद्ध बहुत हो गई। चार-पांच दिनों में ही आपका नाम दक्षिण अफ्रीका में हर एक की ज़बान

पर था।

इसके बाद तो घटना पर घटना होने लगी।

आप पहले दर्जे में यात्रा कर रहे थे। एक अफसर ने आकर आपसे कहा :

"उतरो, तुमको दूसरे डिब्बे में जाना होगा।"

"मेरे पास पहले दर्जे का टिकट है।"

"कोई बात नहीं। तुम्हें उतरना ही होगा।"

"मैं डरबन से इसी डिब्बे में बैठा हूं और बैठा रहूंगा।"

"तुम नहीं उतरोगे तो सिपाही आकर उतार देगा।"

"सिपाही आकर भले ही मुझे उतारे, मैं अपने-आप नहीं उतरूंगा।"

गांधीजी नहीं उतरे। तब सिपाही आया। उसने धक्के देकर उन्हें नीचे उतार दिया। गाड़ी चल दी। आप वेटिंग-रूम में बैठ गए। जाड़े का मौसम था। ठिठुरते हुए सारी रात गुज़ारी।

दूसरे दिन जब आप दूसरे शहर 'चार्ल्स टाउन' पहुंचे तो अंग्रेज़ कोचवान ने भी आपसे दुर्व्यवहार किया। गांधीजी ने जब कुछ कहा तो उसने इनको पीटना शुरू कर दिया।

गांधी—इसमें सन्तरी का क्या अपराध ? यह हब्शियों को भी इसी भांति पटरी से उतारता होगा ।

कोटल—फिर भी मिस्टर गांधी, ऐसे मूर्ख आदमी नम्रता या समझाने से ठीक रास्ते पर नहीं आते । इन्हें तो दण्ड दिलवाकर ही सुधारा जा सकता है ।

गांधी—मेरा सिद्धान्त है कि मैं अपने कष्ट के लिए किसी पर मुकदमा नहीं चलाता ।

कोटल—इस तरह तो इन लोगों की आदतें और भी खराब होंगी ।

कोटल ने सन्तरी को बताया कि यह कोई साधारण आदमी नहीं, हिन्दुस्तान के बैरिस्टर श्री गांधी हैं । तो उसे बड़ा दुःख हुआ । उसका क्रोध ठण्डा पड़ गया । वह गांधीजी के चरणों पर गिर पड़ा और उनसे क्षमा मांगी । गांधीजी ने उसे सम्मानपूर्वक उठाया । लज्जा के कारण उसका मस्तक अब भी झुका हुआ था ।

संसार के सब महापुरुषों में एक गुण पाया जाता है, वह है क्षमा । उनके लिए सारा संसार उनका परिवार होता है, शत्रु भी उनका मित्र होता है । ईसा को देखो, उनका चित्त इतना निर्मल और उनका स्वभाव इतना दयालु था कि वह सज्जन एवं दुर्जन सब को क्षमा कर देते थे । उन्हें अपने जीवन में कभी भी किसी

लगी। गांधीजी बेहोश हो गए। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की पत्नी अचानक उधर से गुज़र रही थी। उसने आपकी प्राणरक्षा की।

पुलिस की रक्षा में आपको घर पहुंचाया गया। शाम हो गई थी; अंधेरा हो चुका था। घर के अन्दर शान्ति थी, किन्तु बाहर हज़ारों गोरे शोर मचा रहे थे, "गांधी को हमारे हवाले कर दो!"

उस समय आपने पुलिस कप्तान की सलाह से बड़ी मुश्किल से जान बचाई। आपने वेष बदल लिया। हिन्दुस्तानी सिपाही की वर्दी पहनी। सिर पर पीतल की तश्तरी रखकर लम्बा साफा लपेटा। इस वेष में आप घर के पीछे से छिपकर पड़ोस की दुकान में पहुंचे। वहां एक गाड़ी में बैठकर थाने में पहुंचे। गोरों की प्यास ठंडी नहीं हुई। उन्हें निराश होना पड़ा।

इस घटना की चर्चा ब्रिटिश पार्लियामेण्ट तक पहुंच गई। स्वर्गीय चेम्बरलेन ने दक्षिणी अफ्रीका के अधिकारियों को अपराधियों पर मुकदमा चलाने का तार दिया। किन्तु गांधीजी ने कहा, "मैं किसी पर मुकदमा नहीं चलाना चाहता।"

बोअर-युद्ध में सेवा-कार्य

अंग्रेज गोरों के हाथ से इतने अत्याचार सहने के बाद भी गांधीजी ने 'बोअर-युद्ध' में अंग्रेज़ी साम्राज्य का साथ दिया। आपका विश्वास था कि अंग्रेज़ी साम्राज्य में रहकर ही भारत की उन्नति हो सकती है।

दक्षिणी अफ्रीका के बोअर लोगों ने अंग्रेज़ी राज्य के विरुद्ध लड़ाई छेड़ दी थी। गांधीजी ने घायल अंग्रेज़ी सिपाहियों की सेवा के लिए भारतीयों का एक दल बनाया। इस दल ने युद्ध के मैदान में जाकर जान को जोखिम में डालकर भी सेवा का काम किया।

घायलों को डोली में रखकर दूर ले जाना और दवा-दारू करना इस दल का काम था। कई बार इस दल को २०-२५ मील का फासला तय करना पड़ता था।

इस सेवा-कार्य के बाद दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों का सम्मान होने लगा था। छः सप्ताह तक यह सेवा-कार्य चलता रहा। इस युद्ध के बाद गांधीजी जब भारत को वापस आ रहे थे, तो भारतीयों ने गांधीजी को बहुत-सी कीमती चीज़ें भेंट में दीं। गांधीजी ने उन सब चीज़ों को बेच कर जो धन आया, उसे जनता की सेवा में व्यय करने के लिए एक कमेटी के सुपुर्द कर दिया।

इन भेंटों को वापस करते हुए आपकी अपनी पत्नी कस्तूरबा से कहा-सुनी भी हो गई। इन भेंटों में कई सोने की कंठियां और हीरे की अंगूठियां थीं। श्रीमती कस्तूरबा उन्हें वापस नहीं करना चाहती थीं। किन्तु उनके तीखे तानों को सहते हुए भी गांधीजी ने सब चीज़ें वापस कर दीं। "लोकसेवा के बदले जो भेंट मिलती है, उसपर जनता का ही अधिकार है।" यह गांधीजी का निश्चित मत था।

दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह

भारतवर्ष में आकर आपने बम्बई के गिरगांव इलाके में एक मकान लिया और वकालत शुरू करने का निश्चय किया। यहां आते ही आपका दस वर्ष की उम्र का लड़का मणिलाल बीमार पड़ गया। डाक्टरों ने अण्डे और मुर्गी का शोरबा देने की सलाह दी; किन्तु आपने जल-चिकित्सा से ही रोग को शान्त कर दिया।

बम्बई में आए अभी कुछ मास ही हुए थे कि दक्षिण अफ्रीका से तार आ गया—'चेम्बरलेन यहां आ रहे हैं, तुम्हें शीघ्र आना चाहिए।'

आप शीघ्र ही फिर दक्षिण अफ्रीका चले गए।

वहां भारतीयों के डेपुटेशन के साथ चेम्बरलेन से मिले। किन्तु दक्षिण अफ्रीका के कानून में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। दक्षिण अफ्रीका की सरकार टस से मस न हुई। अन्त में आपने सत्याग्रह का हथियार उठाया। यह हथियार बिल्कुल नया था और इसका प्रयोग भी बिल्कुल मौलिक था। दक्षिण अफ्रीका की सरकार के भारतीय विरोधी आर्डिनेन्स के प्रति विरोध प्रकट करने के लिए ११ सितम्बर, १६०६ को सभा बुलाई गई। इसमें यह प्रस्ताव भी पास किया गया—"भारतीयों को इस बिल के आगे सिर नहीं झुकाना चाहिए। अवज्ञा के कारण जो कष्ट उठाने पड़े, उन्हें झेलना चाहिए।" इस कार्य को उस समय 'निष्क्रिय प्रतिरोध' कहते थे। बाद में इसी का नाम सत्याग्रह पड़ा।

इस प्रस्ताव के बाद सत्याग्रह शुरू हो गया। गांधीजी को दो महीने की कैद की सजा हुई।

दक्षिण अफ्रीका की जेल बड़ी भयानक थी। यहां जेल की कोठरियों के दरवाजों में लोहे की छड़े नहीं थीं, बल्कि दरवाजे ठोस लोहे के थे। हवा के लिए दीवार में एक झरोखा ही था। आपके बाद सत्याग्रही कैदियों के झुण्ड आने लगे। बाद में जनरल स्मट्स ने आपको मिलने के लिए बुलाया और सुलह की तजवीज़

पेश की। काला कानून रद्द करने की प्रतिज्ञा की गई और सब कैदी छोड़ दिए गए।

दक्षिण अफ्रीका के कुछ लोग इस समझौते की तजवीज़ से नाराज़ थे। गांधीजी ने समझौते में यह मान लिया था कि भारतीय लोग स्वेच्छा से परवाने पर दस्तख़त करेंगे—उनसे ज़बर्दस्ती नहीं होगी। जो लोग स्वेच्छा से भी परवाने पर दस्तख़त करने के विरोधी थे, उन्हें इस समझौते से बड़ा असन्तोष हुआ। उनमें से कुछ ने गांधीजी को मारा-पीटा। गांधीजी का होंठ फट गया था, पसलियां दब गई थीं। अपराधी गिरफ्तार कर लिए गए थे, किन्तु आपने उन्हें छुड़वा दिया।

बात यहीं समाप्त हो जाती तो दक्षिणी अफ्रीका का मामला निपट जाता। किन्तु स्मट्स ने गांधीजी की सज्जनता का लाभ उठाकर काला कानून रद्द करने की प्रतिज्ञा तोड़ दी। इसके उत्तर में गांधीजी को फिर सत्याग्रह का युद्ध शुरू करना पड़ा।

यह सत्याग्रह खूब चला। हज़ारों भारतीय और कुछ अभारतीय भी जेल में गए। भारत से माननीय गोखले भी जांच के लिए दक्षिण अफ्रीका पधारे। उनके समझाने से जनरल स्मट्स ने 'इंडियन रिलीफ बिल' नाम से नया बिल पेश करना स्वीकार कर लिया

गांधीजी के सत्याग्रह की यह विजय उनके जीवन की पहली विजय थी। आठ साल के बाद यह सत्याग्रह सफल हुआ था। इस सत्याग्रह ने गांधीजी का नाम संसार भर में प्रसिद्ध कर दिया। हिन्दुस्तान का बच्चा-बच्चा आपके नाम से परिचित हो गया। ब्रिटेन के राजनीतिज्ञ भी आपके व्यक्तित्व से प्रभावित हो गए थे।

ब्रह्मचर्य का व्रत

दक्षिणी अफ्रीका का सत्याग्रह करते हुए गांधीजी ने दो-तीन ऐसे व्रत लिए जिनका उनके जीवन पर स्थायी प्रभाव रहा। उनमें पहला व्रत भविष्य में जीवन भर ब्रह्मचारी रहने का था। यह व्रत आपने १९०६ में लिया था।

आपने अनुभव किया कि लोक-सेवा के किसी भी काम के लिए ब्रह्मचर्य अनिवार्य है। प्रजोत्पत्ति, संतति-पालन और लोक-सेवा के काम एक साथ नहीं चल सकते। इस व्रत को निभाना बड़ा कठिन काम था। गांधीजी ने स्वयं आत्म-कथा में लिखा है—"बुढ़ापे में भी ब्रह्मचारी रहना कितना कठिन काम है, यह मैं जानता हूं। दिन-प्रतिदिन मुझे यह महसूस होता जा

रहा है कि इस व्रत का पालन करना तलवार की धार पर चलना है।" बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी इस व्रत को निभाने में असमर्थ रहे थे। किन्तु गांधीजी का आत्म-बल उन निर्बल ऋषियों से भी ऊंचा था।

व्रत लेने से पूर्व गांधीजी ने अपनी पत्नी से सलाह नहीं की थी। व्रत लेने के बाद आपने उनसे सलाह-मशवरा किया। कस्तूरबा ने भी इस व्रत में कोई आपत्ति नहीं की।

इस व्रत के बाद गांधीजी ने अपना गृह-जीवन बिलकुल सादा बना लिया। जेल-जीवन के नियमों का ही पालन घर में भी होने लगा। भोजन में भी बहुत से परिवर्तन किए।

दूध और नमक का त्याग

गांधीजी ने यह भी अनुभव किया कि दाल और नमक के त्याग से भी ब्रह्मचर्य-पालन में सहायता मिलेगी। आपने तुरन्त नमक और दाल का परित्याग कर दिया।

"आप तो बड़े हठी हैं। किसी का कहना मानना आपने सीखा ही नहीं।" यह कहते हुए कस्तूरबा आंसू बहाती हुई व्यर्थ ही इस व्रत को न लेने का आग्रह

बा और बापू

KEXAMS

करती रहीं। किन्तु गांधीजी ने कहा :

"मैंने जो प्रतिज्ञा कर ली, वह टूट नहीं सकती।"

दूध के सम्बन्ध में भी गांधीजी को यह विश्वास हो गया था कि दूध ब्रह्मचर्य का शत्रु है, दूध से विकार पैदा होते हैं। उन दिनों आपने कहीं यह पढ़ा कि ग्वालों द्वारा भैंसों पर अत्याचार होता है। इसलिए आपने दूध छोड़ने का भी व्रत ले लिया।

फलाहार में भी यह धारणा रखी गई कि सस्ते से सस्ते फल खाए जाएं।

इन निश्चयों का प्रयोग आपने अपने घर ही नहीं किया, बल्कि अफ्रीका में आपने जो 'टालसटाय आश्रम' खोला था उसके छात्रों पर भी किया। इस आश्रम में हिन्दू, मुसलमान, पारसी ईसाई सभी थे। गांधीजी ने लिखा है—"इन प्रयोगों से मुझे यह अनुभव हुआ है कि जिसका मन संयम की ओर झुक रहा है उसके लिए भोजन की मर्यादा और निराहार बहुत सहायक होते हैं।"

दूध छोड़ने के व्रत में आपको तब ढील करनी पड़ी जब आप भयंकर पेचिश से पीड़ित थे। डाक्टरों ने कहा, "जब तक आप दूध नहीं लेंगे तब तक शरीर नहीं सुधरेगा।"

गांधीजी बोले, "आप पिचकारी से दें तो दे दें। दूध तो मैं नहीं लूंगा।"

किन्तु कुछ तर्क-वितर्क के बाद आपने बकरी का दूध लेना स्वीकार कर लिया।

स्वदेश-आगमन

दक्षिण अफीका में ११ साल बिताने के बाद आप फिर स्वदेश के लिए रवाना हुए। साथ में आपकी पत्नी कस्तूरबा भी थीं। भारत में आने से पहले आप श्री गोखले से भेंट करने इंग्लैण्ड गए। वहां कुछ दिन रहकर आप बम्बई आए।

बम्बई पहुंचते ही आपको बम्बई के गवर्नर ने भेंट के लिए बुलाया और कहा—"आपसे मैं एक वचन लेना चाहता हू, कि सरकार के सम्बन्ध में यदि आपको कहीं आन्दोलन करना हो तो उससे पहले आप मुझसे मिल लें और बातचीत कर लें।" गांधीजी ने ऐसा ही करने का वचन दिया।

बम्बई से आप पूना पहुंचे। वहां गोखले का आग्रह था कि आप उनकी 'भारत सेवक समिति' के सदस्य बनें, किन्तु आपने उस समिति के आदर्शों से असहमत होने के कारण सदस्यता स्वीकार नहीं की।

पूना से आप
और यहूदों का भ
की बकात के सम
शिकायतें सुनीं ।

तत्कालीन वाइस
ने जांच के बाद
गांधीजी के पुन
पहली विजय थी

।

कलापूर्ण सादगी-भरे जीवन का आप पर बहुत प्रभाव पड़ा। शान्तिनिकेतन में अभी एक सप्ताह ही रहे थे कि पूना से श्री गोखले का तार आ गया। श्री गोखले ने आपसे उनकी सोसाइटी में शामिल होने का आग्रह किया था। किन्तु दोनों के सिद्धान्तों में इतना अन्तर था कि आप सदस्य नहीं बन सके।

हरिद्वार से श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी ने हरिद्वार में आश्रम बनाकर रहने का निमन्त्रण दिया था। गुजरात से भी कई निमन्त्रण आए। अंत में अपनी जन्मभूमि गुजरात में ही आपने आश्रम की स्थापना की।

आश्रम की स्थापना

आश्रम का नाम रखा गया 'सत्याग्रह-आश्रम'। पैंतीस सदस्यों के प्रवेश के साथ अहमदाबाद से कुछ दूर साबरमती नदी के किनारे आश्रम की नीव रखी गई। आश्रम के नियम बड़े कड़े थे। सुबह चार बजे उठकर सम्मिलित प्रार्थना होती थी। गीता-पाठ होता था। फिर गांधीजी प्रवचन करते थे। आश्रम की रसोई में जो भोजन बनता था, उसमें मसाला-मिर्च नहीं पड़ता था। हरिजन लोग भी सबके साथ बैठकर खाना खाते थे; यहां कातना, पीसना सिखाया जाता

पूना से आप राजकोट गए। काठियावाड़ के कुछ और शहरों का भी दौरा किया। वहां आपने वीरमगाम की ज़कात के सम्बन्ध में लोगों की ओर से बहुत-सी शिकायतें सुनीं। उन शिकायतों की चर्चा आपने

गांधीजी और गोखले

तत्कालीन वाइसराय लार्ड चेम्सफोर्ड से की। वाइसराय ने जांच के बाद उन शिकायतों को दूर कर दिया। गांधीजी के पुनः भारत वापस आने पर उनकी यह पहली विजय थी जिसने जनता का ध्यान आपकी ओर खींचा।

राजकोट से आप शान्तिनिकेतन गु[illegible] ना के

कलापूर्ण सादगी-भरे जीवन का आप पर बहुत प्रभाव पड़ा। शान्तिनिकेतन में अभी एक सप्ताह ही रहे थे कि पूना से श्री गोखले का तार आ गया। श्री गोखले ने आपसे उनकी सोसाइटी में शामिल होने का आग्रह किया था। किन्तु दोनों के सिद्धान्तों में इतना अन्तर था कि आप सदस्य नहीं बन सके।

हरिद्वार से श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी ने हरिद्वार में आश्रम बनाकर रहने का निमन्त्रण दिया था। गुजरात से भी कई निमन्त्रण आए। अंत में अपनी जन्मभूमि गुजरात में ही आपने आश्रम की स्थापना की।

आश्रम की स्थापना

आश्रम का नाम रखा गया 'सत्याग्रह-आश्रम'। पैंतीस सदस्यों के प्रवेश के साथ अहमदाबाद से कुछ दूर साबरमती नदी के किनारे आश्रम की नींव रखी गई। आश्रम के नियम बड़े कड़े थे। सुबह चार बजे उठकर सम्मिलित प्रार्थना होती थी। गीता-पाठ होता था। फिर गांधीजी प्रवचन करते थे। आश्रम की रसोई में जो भोजन बनता था, उसमें मसाला-मिर्च नहीं पड़ता था। हरिजन लोग भी सबके साथ बैठकर खाना ख[illegible]ां कातना, पीसना सिखाया जाता

आप के बहुत-से मित्र नाराज़ हो गए; किन्तु अंग्रेज़ों को आपत्ति के समय सहायता देना आपने अपना कर्त्तव्य माना। इस सहायता में आपने स्वयं रंगरूटों की भर्ती की थी। कोई भी काम आप आधे दिल से नहीं करते थे।

सत्याग्रह की योजना

महायुद्ध समाप्त होने के बाद जब अंग्रेज़ी सरकार ने भारतीयों की सेवाओं का पुरस्कार रालेट कानून के रूप में देने का निश्चय किया तो आप अंग्रेज़ों की कृतघ्नता पर चौंक उठे। उन दिनोंआप अहमदाबाद में ही थे। श्री वल्लभाई से रोज भेंट होती थी। उनके सामने आपने यह विचार प्रकट किया—"इस कानून का विरोध में सत्याग्रह करके रहूंगा।" शीघ्र ही सत्याग्रह का

सरोजिनी नायडू

प्रतिज्ञा-पत्र तैयार किया गया। उसपर आपके अति-रिक्त वल्लभभाई और श्रीमती सरोजिनी नायडू के भी हस्ताक्षर हुए। सत्याग्रह-सभा की भी स्थापना हुई। आप उसके अध्यक्ष बने। रालेट बिल के धारा सभा मे पेश होने के बाद आप वाइसराय से मिले, उन्हें कई पत्र लिखे, किन्तु इस बार उनकी सुनवाई नही हुई। आपने उसके विरुद्ध आन्दोलन शुरू कर दिया।

उन दिनों आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। खड़े होने का भी बल नही था। ऊंची आवाज से बोलने की शक्ति भी नहीं थी। फिर भी आपने भारत-भर में घूमकर हलचल शुरू कर दी। मद्रास में गए तो श्री राजगोपालाचारी से भेंट हुई। श्री राजगोपालाचारी से यह प्रथम परिचय था। उनके साथ मिलकर आपने सत्याग्रह की योजना को ठोस रूप दिया। कानून का सविनय भंग किस तरह हो सकता है, इसकी भी चर्चा हुई।

श्री राजगोपालाचारी

आप जब मद्रास में थे तभी आपको सूचना मिली कि रालेट विल कानून बन गया है। सारी रात आपको नींद नहीं आई। सवेरे ही श्री राजगोपालाचारी को बुलाकर आपने कहा, "मुझे रात को स्वप्न में विचार आया है कि इस कानून के जवाव में हमें सारे देश में हड़ताल मनानी चाहिए।"

श्री राजगोपालाचारी को यह योजना पसन्द आई। आखिर ३० मार्च, १९१९ के दिन हड़ताल करने की घोषणा कर दी गई।

वाद में इस तिथि में परिवर्तन किया गया, किन्तु दिल्ली में ३० मार्च को ही हड़ताल मनाई जा चुकी थी। वहां सरकार ने हज़ारों को गोलियों से भून डाला था। लाहौर और अमृतसर में भी ऐसे ही गोलीकांड हुए। वम्वई में ६ अप्रैल को गांधीजी की उपस्थिति में यह हड़ताल मनाई गई। वम्वई की सभा में आपने भी भाषण किया। उसी दिन आपने 'सविनय अवज्ञा भंग' की भी घोषणा कर दी।

७ अप्रैल की रात को आप दिल्ली के लिए चल पड़े। दिल्ली के पास एक स्टेशन पलवल पर पुलिस-अफसर ने आपको सरकार का यह हुक्म दिखाया कि 'पंजाब की सीमा में दाखिल मत होओ।' आपने इस

आज्ञा को मानने से इन्कार कर दिया। आपको गाड़ी से उतार लिया गया और मथुरा की ओर जाने वाली गाड़ी में बैठा दिया गया। बाद में आपको फिर बम्बई वापस पहुंचा दिया गया।

हिमालय जैसी भूल

बम्बई में आकर आपको मालूम हुआ कि अहमदाबाद में भी खून-खराबी हुई थी। आप दौड़े हुए वहां गए। वहां मार्शल-ला जारी था। लोग डरे हुए थे। इन शहरों में कुछ सिपाहियों को भी घायल होना पड़ा था। दो-तीन मरे भी थे।

इस रक्तपात का प्रायश्चित्त करने के लिए आपने तीन दिन का उपवास किया।

उपवास से ही आपकी आत्मा को सन्तोष नहीं मिला। आपने सत्याग्रह बन्द करने का भी निश्चय कर लिया, और सत्याग्रह शुरू करने को 'हिमालय जैसी बड़ी भूल' स्वीकार किया। आपने 'आत्मकथा' में लिखा है कि "उस समय सविनय भंग का न्योता देने की भूल मुझे हिमालय जैसी लगी। मुझे जान पड़ा कि मैंने सामने की दीवार को देखे बिना ही आंखें मूंदकर सरपट दौड़ लगाई है।"

यह भूल आपको और भी बड़ी मालूम होने लगी जब आपको दिल्ली के हत्याकांडों और अमृतसर के जलियांवाला बाग के हत्याकांडों का समाचार सुनाया गया। आप पंजाब में जाकर अपनी आंखों सब देखना चाहते थे, किन्तु सरकार इजाज़त नहीं देती थी। अन्त में एक दिन यह इजाज़त मिल गई।

पंजाब आकर आप मालवीयजी, स्वामी श्रद्धा-

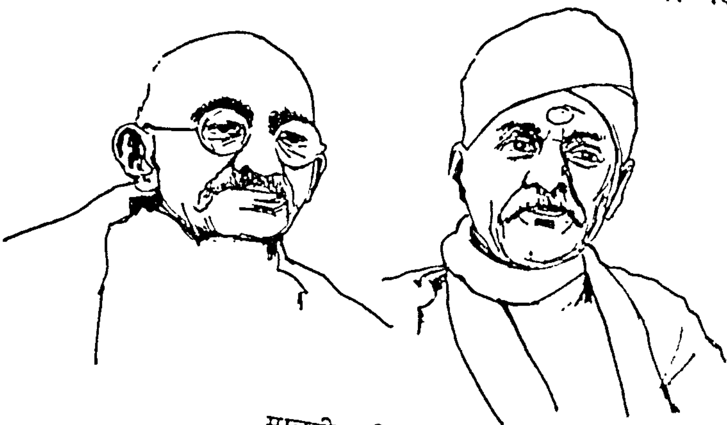

मालवीय जी के साथ

नन्दजी और मोतीलालजी से मिले। उनसे फौजी कानून की तहकीकाती कमेटी 'हंटर कमेटी' के सामने बयान देने के विषय में चर्चा की। सबने इस हन्टर कमेटी के बहिष्कार करने का निश्चय किया, और यह भी फैसला किया गया कि कांग्रेस की ओर से जांच-कमेटी नियुक्त

की जाए। इस कमेटी की व्यवस्था का बोझ आप पर ही पड़ा। आप ने पंजाब के गांवों में भ्रमण करके रिपोर्ट तैयार की। अंग्रेजी हाकिमों की नादिर-शही देखकर आप-का दिल रो उठा। उस रिपोर्ट की एक भी बात आज तक असत्य सिद्ध नहीं हो सकी।

स्वामी श्रद्धानंद

कांग्रेस में प्रवेश

लोकमान्य तिलक

जांच-समिति की इतनी सुन्दर रिपोर्ट लिखने के बाद लोकमान्य तिलक, मालवीयजी और मोती-लालजी को आपकी वैधानिक योग्यता पर पूरा भरोसा हो गया। उन्होने आपको कांग्रेस की नई व्यवस्था बनाने का भार सुपुर्द किया। अभी तक

श्री गोखले द्वारा प्रणीत व्यवस्था से ही कांग्रेस का संचालन होता था। अब नई परिस्थितियों में नए

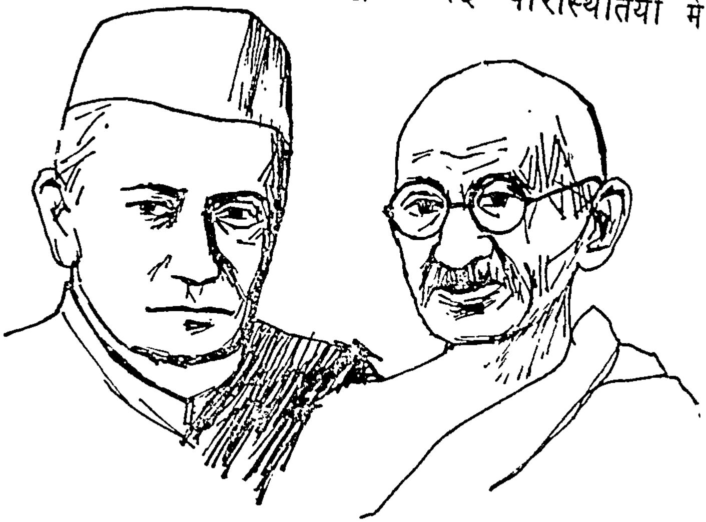

मोतीलाल के साथ

परिवर्तनों की आवश्यकता थी। कांग्रेस का नया विधान बनाने का काम आपने अपने ऊपर लिया। आपने उस समय जो विधान तैयार किया वही कांग्रेस का विधान बन गया। उस विधान पर देश को अभिमान है। गांधीजी के शब्दों में : "यह कार्य करने के साथ ही मैंने कांग्रेस में सचमुच प्रवेश किया।"

कांग्रेस में प्रवेश करने के बाद कांग्रेस आपकी प्रयोगशाला बन गई। दक्षिण अफ्रीका में उन्होंने सत्याग्रह के हथियार से धर्मयुद्ध में विजय पाई थी। उसका

प्रयोग आपने भारत में भी किया। १९१९ से १९४७ तक २८ वर्षों का देश का इतिहास आप के ही प्रयोगों का इतिहास है।

प० नेहरू के साथ

सितम्बर, १९२० में कलकत्ता-कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ। उसमें आपने असहयोग का प्रस्ताव रखा। हज़ारों विद्यार्थियों ने स्कूलों का त्याग किया। हजारों वकील वकालत छोड़कर देशसेवक बन गए।

किसानों में भी जागृति आई। उन्होंने सरकार को लगान न देने का निश्चय किया। जगह-जगह सरकार

से जनता की मुठभेड़ें हुईं। गोरखपुर ज़िले के चौरी-चौरा गांव में तो भयंकर बलवा हो गया। सिपाहियों के अमानुषिक अत्याचारों से तंग आकर कुछ लोगों ने दो-चार सिपाहियों को ज़िन्दा ही आग में झोंक दिया। इस समाचार से गांधीजी बहुत दुःखी हुए। आप सत्याग्रह को सर्वथा हिंसारहित रखना चाहते थे। इस घटना से आप को एक बार फिर यह विश्वास हो गया कि जनत ने आपके सन्देश को नहीं समझा। आपने तुरन्त सत्याग्रह स्थगित करने की घोषणा कर दी। इस घोषणा से देश के हज़ारों देशभक्तों को घोर निराशा हुई। हज़ारों विद्यार्थी स्कूल-कालेज छोड़कर बाहर निकल आए थे। उनका भविष्य अन्धकारमय हो गया। किन्तु गांधीजी अपने निश्चय पर अटल रहे।

भारत में पहली जेल-यात्रा

सत्याग्रह स्थगित हो गया था, किन्तु सरकार के विरुद्ध लड़ाई जारी थी। कोई भी असफलता गांधीजी को निष्क्रिय नहीं बनाती थी। प्रत्येक पराजय से नई शिक्षा लेकर आप फिर नए उत्साह से अपने मार्ग पर चल पड़ते थे। 'हर हार जीत का नया सन्देश लेकर आती थी।' कर्मयोग की यह शिक्षा गांधीजी ने गीता

से ली थी। उसी का प्रयोग अपने जीवन में वे करते थे। असहयोग के प्रयोग की प्रथम असफलता ने भी आपको निराश नहीं किया। आप रचनात्मक कार्यों में लग गए और जनता को अगली लड़ाई के लिए तैयार करने लगे। सरकार की चिन्ता बढ़ गई। सरकार ने आपको गिरफ्तार कर लिया। जज ने छः वर्ष की लम्बी कैद का हुक्म सुना दिया। हिन्दुस्तान में आकर जेल जाने का यह पहला अवसर था।

आपके जेल जाने के बाद सरकार को देश में हिन्दू-मुस्लिम उपद्रवों की आग जगाने का मौका मिल गया। जगह-जगह दंगे-फसाद होने लगे। जेल में इन उपद्रवों के समाचार सुनकर गांधीजी बड़े दुःखी होते थे।

जेल की मियाद पूरी होने से पहले ही आपको जेल से छोड़ने के लिए सरकार मजबूर हो गई। जेल में रहते हुए आपके पेट में भयंकर फोड़ा निकल आया था। आपरेशन के लिए आपको छोडना पड़ा। सरकार चिंतित थी कि यदि जेल में ही प्राणान्त हो गया तो विप्लव की आग अंग्रेजी हुकूमत को धूल में मिला देगी।

जेल से आप छूट गए, किन्तु चिन्ताओं के भार से

मुक्ति नहीं मिली। देश में साम्प्रदायिक उपद्रवों की आंधी चल रही थी। हिन्दू-मुसलमान एक दूसरे के खून के प्यासे हो रहे थे। गांधीजी के सब प्रयत्न निष्फल गए। तब आपने अपने जीवन-दान से साम्प्रदायिकता की प्यास को शांत करने का निश्चय किया। दिल्ली में इक्कीस दिन के उपवास की घोषणा कर दी। दोनो पक्षों के नेता आपके पास आए। और दोनों ने ऐक्य स्थापित करने का प्रण किया। इससे पूर्व इतना लम्बा उपवास आपने नहीं किया था।

राष्ट्रपति के पद पर

१९२४ में आप जेल से छूटे थे। उसी वर्ष अक्तूबर में आपने उपवास किया और उसी वर्ष दिसम्बर में कांग्रेस अधिवेशन के आप अध्यक्ष चुने गए। यह अधिवेशन बेलगांव में हुआ। अधिवेशन के बाद आपने देश का दौरा किया और चित्तरंजनदास के स्मारक के लिए दस लाख रुपये एकत्र किए।

देश के कोने-कोने में भ्रमण करने के बाद आप इसी निश्चय पर पहुंचे कि रचनात्मक कार्यों द्वारा देश को संगठित किए बिना सत्याग्रह में सफलता नहीं मिलेगी। रचनात्मक कार्यों में से आपने सर्वप्रथम दो

कार्यों को चुना—चर्खा और हरिजन-सेवा। ये दोनों काम आपकी जीवनचर्या के अंग बन गए।

भारत में दूसरा सत्याग्रह

१९२० का सत्याग्रह पहला अहिंसात्मक युद्ध था। इस सत्याग्रह ने भारत में एक नये युद्ध की नींव रखी थी। युद्ध तो स्थगित हो गया किन्तु अगले दस वर्ष तक युद्ध की तैयारियां होती रही। १९३० में दूसरा युद्ध शुरू हुआ। युद्ध किसी विशेष कानून को भंग करने के उद्देश्य से नहीं, बल्कि भारत को पूर्ण स्वाधीनता दिलाने के लिए लड़ा गया था।

युद्ध का प्रारम्भ १२ मार्च, १९३० के दिन गांधीजी की 'डाण्डी-यात्रा' से हुआ। २१ मार्च को देश-भर में नमक का कानून तोड़ने का आदेश दिया गया था। सरकार ने दमन-चक्र का सहारा लिया। देश-भर में गिरफ्तारियां हुई। ६ अप्रैल को गांधीजी ने डाण्डी में स्वयं नमक तैयार किया और कानून भंग किया। दूसरे दिन पुलिस ने आपको गिरफ्तार कर लिया।

आपकी गिरफ्तारी से भी सत्याग्रह का काम बन्द नही हुआ। तब सरकार ने देश की शक्ति को पहचाना। घोषणा की गई कि १२ मई को लन्दन में

आप जब मद्रास में थे तभी आप
मिली कि रालेट बिल कानून बन गया है।
आपको नींद नहीं आई। सवेरे ही श्री रा
चारी को बुलाकर आपने कहा, "मुझे रात
में विचार आया है कि इस कानून के ज
सारे देश में हड़ताल मनानी चाहिए।"

श्री राजगोपालाचारी को यह योजना
आखिर ३० मार्च, १९१९ के दिन हड़ता
घोषणा कर दी गई।

बाद में इस तिथि में परिवर्तन किया
दिल्ली में ३० मार्च को ही हड़ताल मना
थी। वहां सरकार ने हज़ारों को गोलियों
था। लाहौर और अमृतसर में भी ऐसे
हुए। बम्बई में ६ अप्रैल को गांधीजी की
यह हड़ताल मनाई गई। बम्बई की सभ
भी भाषण किया। उसी दिन आपने 'स
भंग' की भी घोषणा कर दी।

७ अप्रैल की रात को आप दिल्ली
पड़े। दिल्ली के पास एक स्टेशन पलवल
अफसर ने आपको सरकार का यह हुक्म
'पंजाब की सीमा में दाखिल मत होओ

देश-चिन्तन से नहीं रोक सकती थीं। उन्हीं दिनों सरकार ने एक ऐसा काम किया जिससे आपकी आत्मा को असीम दुःख हुआ। १२ अगस्त, १९३२ के दिन ब्रिटिश सरकार ने हरिजनों को शेष हिन्दू समाज से तोड़ने के लिए उन्हें पृथक् प्रतिनिधित्व देने के निश्चय की घोषणा कर दी। गांधीजी ने जेल में रहते हुए भी इसका विरोध किया। पर सरकार अपने निश्चय से न टली। तब आपने यरवदा जेल के एक आम के वृक्ष के नीचे २० सितम्बर से अनशन शुरू कर दिया। छः दिन में ही सरकार अपने निर्णय में परिवर्तन करना मान गई। गांधीजी के आत्मबल ने विजय पाई। ३० अप्रैल, १९३३ के दिन गांधीजी ने फिर उपवास द्वारा आत्म-शुद्धि करने के निश्चय की घोषणा कर दी। सरकार ने उपवास प्रारम्भ करते ही आपको पूना के पास पर्ण-कुटी में पहुंचा दिया। श्रीमती कस्तूरबा को भी जेल से छोड़ा गया।

सत्याग्रह का युद्ध अभी चल रहा था। इस युद्ध में गांधीजी ३ अगस्त को अहमदाबाद में फिर गिरफ्तार कर लिए गए, और फिर यरवदा जेल भेज दिए गए।

यहां महात्माजी ने जेल की पाबन्दियों के विरुद्ध फिर अनशन किया। इन पाबन्दियों के विरुद्ध आपने

'गोलमेज़ परिषद्' होगी। सप्रू-जयकर गांधीजी से यरवदा जेल में मिले। समझौते की कोशिश की। पर सरकार ने गांधीजी की शर्तें स्वीकार न कीं। समझौता टूट गया।

परन्तु अन्त में सरकार को गांधीजी को छोड़ना पड़ा। वाइसराय से लम्बी बातचीत के बाद ४ मार्च के दिन सन्धिनामा तैयार हुआ। सत्याग्रही कैदी छूट गए।

गांधीजी ने गोलमेज़ परिषद् में भाग लिया, किन्तु कुछ फल न निकला। लन्दन में आपका अपूर्व स्वागत हुआ। सम्राट् जार्ज से भेंट हुई। मज़दूर-घरों में भी आप गए। लन्दनवासी हज़ारों की संख्या में भारत के हृदयसम्राट् को देखने के लिए आपके दर्शनार्थ आते थे।

इस बीच लार्ड इरविन का कार्यकाल समाप्त हो गया था। लार्ड विलिंगडन वाइसराय बना था। उसने देश में दमन का दौर नये जोश से शुरू कर दिया। गांधीजी गोलमेज़ परिषद् से आते ही ४ जनवरी, १९३२ को गिरफ्तार कर लिए गए। कस्तूरबा भी कैद की गईं। वे भी सत्याग्रह में पूरा भाग ले रही थीं।

कम्यूनल अवार्ड के विरुद्ध अनशन

जेल में रहते हुए भी गांधीजी का ध्यान देश की ओर ही लगा रहता था। जेल की दीवारें उन्हें

देश-चिन्तन से नहीं रोक सकती थी। उन्हीं दिनों सरकार ने एक ऐसा काम किया जिससे आपकी आत्मा को असीम दुःख हुआ। १२ अगस्त, १९३२ के दिन ब्रिटिश सरकार ने हरिजनों को शेष हिन्दू समाज से तोड़ने के लिए उन्हें पृथक् प्रतिनिधित्व देने के निश्चय की घोषणा कर दी। गांधीजी ने जेल में रहते हुए भी इसका विरोध किया। पर सरकार अपने निश्चय से न टली। तब आपने यरवदा जेल के एक आम के वृक्ष के नीचे २० सितम्बर से अनशन शुरू कर दिया। छः दिन में ही सरकार अपने निर्णय में परिवर्तन करना मान गई। गांधीजी के आत्मबल ने विजय पाई। ३० अप्रैल, १९३३ के दिन गांधीजी ने फिर उपवास द्वारा आत्म-शुद्धि करने के निश्चय की घोषणा कर दी। सरकार ने उपवास प्रारम्भ करते ही आपको पूना के पास पर्ण-कुटी में पहुंचा दिया। श्रीमती कस्तूरबा को भी जेल से छोड़ा गया।

सत्याग्रह का युद्ध अभी चल रहा था। इस युद्ध में गांधीजी ३ अगस्त को अहमदाबाद में फिर गिरफ्तार कर लिए गए, और फिर यरवदा जेल भेज दिए गए।

यहां महात्माजी ने जेल की पाबन्दियों के विरुद्ध फिर अनशन किया। इन पाबन्दियों के विरुद्ध आपने

१६ अगस्त को आमरण अनशन किया। सरकार ने आपको जेल से छोड़ दिया। आप फिर पर्णकुटी लाए गए।

हरिजन-सेवा

हरिजनों को अलहदा प्रतिनिधित्व देने के विरुद्ध अनशन करने के बाद आपने हरिजनों के लिए काम करने का संकल्प किया था। इसलिए स्वास्थ्य ठीक होते ही आप ७ नवम्बर, १६३३ को हरिजनों के लिए दौरा करने निकल पड़े। इस दौरे में आप पंजाब भी गए। कस्तूरबा भी गईं। गांधीजी ने ८ लाख रुपये एकत्र किए और 'हरिजन-सेवा-संघ' की स्थापना की।

महायुद्ध के बाद

१९३९ में महायुद्ध की घोषणा के बाद गांधीजी को फिर राजनीति में भाग लेना पड़ा। भारत से परामर्श लिए बिना ब्रिटिश सरकार ने भारत की ओर से युद्ध की घोषणा कर दी थी। कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों ने इस प्रश्न पर प्रांतीय सरकारों को इस्तीफे दे दिए थे। कांग्रेस ने एक बार फिर ब्रिटिश सरकार से पूर्ण

स्वाधीनता की माग की। सरकार ने इस मांग को ठुकरा दिया। गांधीजी ने फिर देश की वागडोर हाथ में ली। आखिर वम्बई में ९ अगस्त, १९४२ के दिन 'भारत से चले जाओ' का प्रस्ताव कांग्रेस ने स्वीकार कर लिया। सरकार ने इसका उत्तर ९ अगस्त को सब नेताओं की गिरफ्तारी से दिया।

देश में आग लग गई। यह स्वाधीनता का अंतिम युद्ध था। अन्य सत्याग्रह-युद्धों की तरह यह पूर्ण रूप से अहिंसात्मक नहीं था।

सुभाषचन्द्र बोस के साथ

उन दिनों विश्वयुद्ध की चिनगारियां देश की सीमा को छू रही थीं। जापान और जर्मनी में स्थित श्री सुभाष की वाणियां बड़े चाव से सुनी जाती थीं। अंग्रेज़ी साम्राज्य अपने जीवन की अन्तिम सांसें ले रहा था।

चर्चिल ने क्रिप्स को सुलह के लिए भेजा था, किन्तु युद्ध का पासा पलटते ही उसे वापस बुला लिया गया। सारे नेता जेल में नज़रबन्द थे। गांधीजी को इस जेलयात्रा में दो हृदयविदारक विदाइयां सहनी पड़ीं। जेलयात्रा के पहले सप्ताह में ही १५ अगस्त, १९४२ के दिन महादेवभाई का स्वर्गवास हो गया। इसके बाद २२ फरवरी, १९४३ को माता कस्तूरबा ने भी देहत्याग कर दिया। कस्तूरबा का शव जब अर्थी पर डाला गया तो लोगों ने पहली बार गांधीजी की आंखों में बेबसी के आंसू देखे थे।

१९४४ के मई मास में गांधीजी को जेल से छोड़ दिया गया। जेल से छूटने के बाद आपने देखा कि पूर्ण स्वाधीनता के मार्ग में सबसे बड़ी रुकावट मि० जिन्ना थे। मि० जिन्ना ने मुसलमानों के लिए 'पाकिस्तान' बनाने की मांग पेश कर दी। गांधीजी स्वयं जिन्ना से मिलने बम्बई आए। उन्होंने जिन्ना को समझाने की बहुत कोशिश की, किन्तु मि० जिन्ना टस से मस नहीं

हुए। आखिर हारकर देश के नेता हिन्दुस्तान को दो भागों में खण्डित करना मान गए। गांधीजी इस निश्चय के विरोधी थे, किन्तु अपने अनुयायी नेताओं के आग्रह के विरुद्ध उन्होंने आवाज़ नहीं उठाई।

२ सितम्बर, १९४६ को अन्तरिम सरकार बनी। कलकत्ता में इस मंत्रिमण्डल के विरुद्ध मुसलमानों ने जो प्रतिवाद किया, उसमें भयंकर रक्तपात हुआ।

नोआखाली-यात्रा

कलकत्ता की चिनगारियां नोआखाली तक भी पहुंचीं। धर्मान्ध मुसलमानों ने नरमेध शुरू कर दिया। नोआखाली के हिन्दुओं की चीत्कार से सारा देश कांप उठा। गांधीजी ने नोआखाली जाकर इस दानवी आग को बुझाने का निश्चय किया।

१५ अगस्त, १९४७ के दिन जब हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े शहर अगणित दीपों से जगमगा रहे थे, गांधीजी उजड़े हुए नोआखाली की एक अंधेरी कुटी में बैठे हुए थे। आपके हृदय मे प्रसन्नता की हिलोर नहीं उठी थी, क्योंकि स्वतन्त्रता के आने के साथ हिन्दू-मुस्लिम उपद्रव भी आए थे। नोआखाली के दृश्यों ने आपकी आत्मा को गहरी वेदना में डाल दिया था।

१५ अगस्त के आज़ादी दिवस के साथ पंजाब का ज्वालामुखी भी फूट पड़ा। पंजाब की आग को शान्त करने के लिए आप नोआखाली से पंजाब के लिए चल पड़े, किन्तु आपके दिल्ली आने तक दिल्ली की गलियों में भी खून की होली शुरू हो गई थी। जवाहरलालजी के आग्रह से आप दिल्ली ही ठहर गए। वहां प्रतिदिन शाम को प्रार्थना-सभा में आप शान्ति का उपदेश देते थे। आप के रहते हुए भी जब दिल्ली का रक्तपात शान्त नहीं हुआ तो आपने अनशन का व्रत शुरू किया। तीन-चार दिन के अनशन के बाद ही दिल्ली में हिन्दू-मुस्लिम उपद्रव बन्द हो गए।

पंजाब से लाखों लोग दिल्ली आते थे और अपने दुःखों की कहानी कहने बापू के चरणों में जाते थे। आप कहा करते थे–"सब कुछ मेरे हाथ में नहीं है, मेरे वश में हो तो मैं वाइसराय भवन में निराश्रितों को बसा दूं।"

महाप्रयाण

प्रतिदिन शाम को आपकी प्रार्थना-सभा में हज़ारों व्यक्ति उपस्थित होते थे। नई दिल्ली में बिरला-निवास के बाहर बगीचे में प्रार्थना होती थी। आपके

शान्तिमय प्रवचनों से कुछ धर्मान्ध हिन्दू उत्तेजि गए और आपकी हत्या का षड्यन्त्र बनाया। इस षड्यन्त्र के अनुसार मदनलाल नाम के एक युवक ने एक दिन बम का गोला प्रार्थना सभा में फेंका। वह गोला पूरी तरह फटा नहीं। सरदार वल्लभभाई ने गांधीजी से आग्रह किया कि वे अब अरक्षित अवस्था में प्रार्थना सभा में न जाया करें। किन्तु गांधीजी कब मृत्यु से डरते थे! उन दिनों में वे प्रतिदिन कहा करते थे—"पहले मेरी इच्छा १२५ साल जिन्दा रहने की थी, किन्तु अब मैं अधिक जीवित रहना नहीं चाहता।" धमकियों के पत्र भी आने लगे, किन्तु आप कभी विचलित नहीं हुए। अन्ततः ३० जनवरी, १६४८ की शाम को लगभग ६ बजे महाराष्ट्र के एक युवक नाथूराम गोडसे ने प्रार्थना-सभा में जाकर इस अवतारी पुरुष पर रिवाल्वर से हमला कर दिया। तीन गोलियां आपके खुले सीने से पार हो गईं। मुख से तीन बार 'राम' नाम लेने के बाद आपने प्राण छोड़ दिए।

गांधीजी के बलिदान का समाचार सारी दुनिया में गहरे दुःख के साथ सुना गया। सभी देशों की सरकारों ने शोक प्रकाशित किया और सभी राष्ट्रों के प्रमुख व्यक्तियों ने श्रद्धांजलि भेंट की।

दिल्ली के पास यमुना-तट पर आपका शवदाह हुआ। शव-यात्रा का जलूस मीलों लम्बा था। गांधीजी का देह अग्नि की भेंट हो गया। उनकी आत्मा का संदेश आज भी भारत का पथ-प्रदर्शन कर रहा है।

क्षमा बड़े को चाहिए

फुटपाथ पर चलते-चलते ही किसी ने अचानक गांधीजी को धक्का दिया। वे गिर पड़े। पर जब उठे तो उन्होंने सुना, कोई रोष में भरकर कह रहा था—

तुम्हें दिखाई नहीं देता ? यह फुटपाथ क्या हिन्दुस्तानियों के लिए बनाया गया है ?

अपने वस्त्र झाड़ते हुए गांधीजी खड़े हो गए। उन्होंने देखा; वह एक सन्तरी था। गांधीजी उस समय दक्षिणी अफ्रीका में प्रेसिडेण्ट वूगर के घर के सामने से जा रहे थे। संयोगवश कोटल नाम का उनका अंग्रेज़ मित्र भी उसी मार्ग से जा रहा था। उसने जो गांधीजी को पिटते देखा तो वह पास आया और बोला—आप इस सन्तरी पर मुकदमा चलाएं। मैंने सब कुछ अपनी आंखों से देखा है। मैं आपकी गवाही दूंगा। इन लोगों को अवश्य दण्ड मिलना चाहिए।

खून के प्यासे गोरे

गांधीजी को इन घटनाओं से बहुत दुःख हुआ। उनके हृदय में एक आंधी-सी उठ खड़ी हुई। इस अपमान का उत्तर देने के लिए उनका मन व्याकुल हो उठा। उनके लिए ये घटनाएं नई थी, किन्तु यहां के भारतवासियों को रोज़ इस अपमानपूर्ण व्यवहार का शिकार बनना पड़ता था। फिर भी वे चुप थे। गांधीजी चुप नहीं रहे। उन्होंने सेठ अब्दुल्ला के मुकदमे का आपसी फैसला कराने के बाद इन अत्याचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाई। आंदोलन का श्रीगणेश कर दिया। इससे सारे दक्षिण अफ्रीका में उत्साह की नई लहर फैल गई। हर रोज़ सभाएं होने लगीं। हज़ारों लोग इन सभाओं में आने लगे।

लोगों का उत्साह देखकर आपने वहां 'नेटाल इंडियन कांग्रेस' की स्थापना करके भारतीयों की आत्म-सम्मान की लड़ाई का बीज बो दिया।

इसी कारण दक्षिणी अफ्रीका के गोरे अंग्रेज़ गांधीजी से बहुत चिढ़ गए थे। वे गांधीजी के खून के प्यासे हो गए। एक बार जब आप जहाज से उतरकर घर जा रहे थे तो गोरों ने घेर लिया। पत्थरों की वर्षा होने

पर क्रोध नहीं आया। लोगों ने उन्हें कष्ट दिए, उन्होंने निर्भय होकर सहे। यहाँ तक कि उन्हें सूली पर चढ़ा दिया। पर, फिर भी वे बोले—

"हे परमात्मा, ये मूर्ख हैं, इन्हें क्षमा करो।"

स्वामी दयानन्दजी ने अपने विष देने वाले को केवल क्षमा ही नहीं किया बल्कि उसकी रक्षा के लिए उसे रुपये भी दिए।

गांधीजी ने इस नियम को सदा अपनाया। अपने जीवन में उन्होंने किसी पर भी क्रोध नहीं किया। क्षमा करना ही उनका अस्त्र था। उन्होंने कई बार कहा—

"यदि आप किसी को सुधारना चाहते हैं या अपनी आत्मा को बलवान् बनाना चाहते है तो क्षमा करना सीखिए।"

नम्रता

नाम से तो उस समय सब लोग बापू को जानते थे। पर क्योंकि वह अभी-अभी दक्षिणी अफ्रीका से लौटे थे, इसलिए उन्हें सूरत से कम लोग ही पहचानते थे।

बहुत वर्षों की बात है—गांधीजी को लाहौर से

दिल्ली जाना था। उन दिनों गांधीजी अकेले ही यात्रा करते थे। गांधीजी स्टेशन पर पहुंचे तो देखा कि गाड़ी में भीड़ के कारण तिल रखने को स्थान न था। धक्कमधक्का करने का तो उनका स्वभाव नहीं था, नहीं तो वह भी किसी को धक्का देकर आगे बढ़ जाते। उन्होंने बहुत प्रयत्न किया पर स्थान न पा सके। अन्त में एक कुली ने बारह आने का पुरस्कार लेकर गाड़ी में बिठाने की बात की। फिर क्या था। कुली ने एक खिड़की से बापू को भीतर ढकेल दिया।

गाड़ी चल दी लोगों ने लड़-झगड़कर अपनी-अपनी सुविधा के अनुसार अपने लिए स्थान कर लिया। पर बापू ज्यों के त्यों खड़े रहे। रात भर की यात्रा थी। इस भांति खड़े रहना भी कठिन था। लोगों को बापू की सादगी तथा इस नम्रता पर बड़ा विस्मय हुआ। किसी ने कौतूहलवश पूछ ही तो लिया—

"तुम बैठ क्यों नहीं जाते ?"

बापू—स्थान ही कहां है ?

इस तरह तो थक जाओगे। रात भर की यात्रा है, कोई हँसी थोड़े ही है। तुम्हारा नाम क्या है ?

बापू ने जो अपना नाम बताया तो डब्बे भर में सन्नाटा छा गया। लज्जा से लोगों की गर्दनें झुक

गई। बापू के सम्मान में लोग अपनी-अपनी जगह से खिसकने लगे। बात की बात में बापू के लिए सोने का स्थान हो गया।

लोग सोचने लगे—यदि बापू चाहते तो अपना नाम बताकर कभी का स्थान पा चुके होते। पर बापू ने कभी भी अपने को किसी से बड़ा नहीं समझा। सदा नम्र होकर ही रहे।

गांधीजी स्वयं तो नम्रता के अवतार थे ही। वे संसार को भी नम्र बनाना चाहते थे। उन्होंने नम्रता को समझाते हुए अपने सायंकाल के एक भाषण में कहा है—

"नम्रता का अर्थ है अहंकार का नाश। स्वाभाविक नम्रता कभी भी छिपी नहीं रहती। ऋषि वसिष्ठ और विश्वामित्र का उदाहरण तो हम लोगों ने कई बार सुना है। हमारी नम्रता भी ऋषि वसिष्ठ की तरह होनी चाहिए। हम कुछ हैं—जहां यह भूल मन पर सवार हुई कि नम्रता हवा हो गई। क्योंकि मनुष्य है कुछ नहीं। वह एक बूंद के समान है जो समुद्र में रहती है। जब तक वह समुद्र में रहती है, समुद्र का सुख भोगती है। समुद्र से बाहर आकर यदि वह रहना चाहे तो सूख जाती है! इसी तरह मनुष्य जब तक

मन में नम्र है तब तक तो वह सब कुछ है। अहंकारी होने पर वह एक तिनके के समान भी नहीं।

मैं अभी विद्यार्थी हूं !

पूना में गांधीजी ने आश्रम की स्थापना की थी। वे काफ़ी समय तक उसी आश्रम में रहे। वहां रहने वाले आश्रमवासियों को वे बहुत अच्छी-अच्छी बातें सिखाया करते थे। सिखाते समय वे जो कुछ सिखाना चाहते थे, स्वयं भी करके दिखाते थे।

एक समय एक सज्जन गांधीजी से मिलने के लिए पूना गए। आश्रम की अच्छी-अच्छी बातों से वे बहुत प्रभावित हुए। परन्तु जब उन्होंने प्रान्तीय भाषाओं में लिखा वर्णमाला का एक बोर्ड देखा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। हैरानी के साथ उन्होंने बोर्ड को देखते हुए पूछा—बच्चों का स्कूल यहां कब से खुल गया ? आश्रमवासी ने आश्चर्य से पूछा—बच्चों का स्कूल ? बोर्ड की वर्णमाला की ओर इशारा करते हुए वे सज्जन बोले—अरे भाईप्रान्तीय भाषाओं की वर्णमाला बच्चे ही तो सीखते हैं।

आश्रमवासी हँस दिया और बोला—आपको यह भी नहीं मालूम ? सबसे छोटे बच्चे तो बापू हैं।

उस सज्जन को यह सुनकर बहुत ही आश्चर्य हुआ। वे सोचने लगे बापू को भी क्या सूझा। अब बुढ़ापे में वर्णमाला सीखने चले हैं। उनकी समझ में यह कुछ भी नहीं आता था। इसलिए वे सीधे बापू के कमरे में उनसे मिलने गए। काफ़ी देर इन्तज़ार करने के बाद बापू वहां आए। उस सज्जन ने उसी उत्सुकता से बापू से पूछा—बापू आपने वर्णमाला सीखनी शुरू कर दी है ?

बापू—इसमें आश्चर्य की क्या बात ? क्या मैं अभी पढ़ नहीं सकता ?

वे सज्जन बोले—बापू, आप क्या नहीं कर सकते ? पर इस अवस्था में आपको पढ़ते देखकर तो आश्चर्य होता ही है।

बापू—भाई, मैं तो अभी विद्यार्थी हूं। और मरते दम तक विद्यार्थी बना रहूँगा। अपने में जिस बात की कमी अनुभव करूँगा, उसे सीखूंगा। पिछले दिनों बंगाल में नोआखाली की यात्रा करनी पड़ी। वहां मैंने अनुभव किया कि जनता तक अपना सन्देश पहुँचाने के लिए बंगाली भाषा सीखनी चाहिए। मैंने परिश्रम करके बंगाली भाषा भी सीखनी शुरू कर दी। मैं तो सभी को यह शिक्षा देता हूँ कि किसी भी काम के लिए

दूसरों के भरोसे न रहो। कोशिश करो और अपने में वह गुण लाओ।

सादा जीवन, उच्च विचार

बापू कैंची लेकर आई हुई चिट्ठियों में से कागज़ के कुछ भाग काटकर एक ओर रखते जा रहे थे। सामने बैठे एक सज्जन बड़े ध्यान से यह सब देख रहे थे। उनकी समझ में कुछ भी न आ रहा था। पर टोक भी तो नहीं सकते थे? मना करना तो दूर की बात थी। बापू ने देखा। उन्हें कुछ ऐसा प्रतीत हुआ मानो वे कुछ पूछना चाहते हैं, पर पूछते नहीं। बापू स्वयं बोले—

"आप कुछ कहना चाहते हैं?"

उन्होंने कहा—जी हां, मैं पूछना चाहता हूँ कि आप इस कतरन का क्या करेंगे?

बापू बोले—मैं इन पर पत्र लिखूंगा।

मेरे पास जो पत्र आते हैं उनका कोरा भाग इसीलिये काटकर रख लेता हूँ। यदि मैं ऐसा न करूं तो कागज़ व्यर्थ जाए। उससे दो हानियां हैं। एक तो व्यर्थ अधिक खर्च हो, दूसरे देश की सम्पत्ति का नाश। हमारे देश में जितनी भी वस्तुएं है, एक तरह से सोचा

जाए तो सभी देश की सम्पत्ति हैं। जहाँ तक हो सके हम सब को इस भांति बचत करनी चाहिए। हमारा देश तो बहुत गरीब है, हम इस तरह पैसा व्यर्थ में क्यों बहाएँ ?

वे सज्जन चुप रह गए।

बापू ने इस तरह बचत करने का अपना स्वभाव ही बना लिया था। वे बेकार कागज़ों को भी कूड़ेदान में नहीं फेंकते थे। उन्हें काट-छाँटकर उनके लिफ़ाफ़े बनाते और उन्हें काम में लाते थे। उनका कहना था–

"यदि इसी भांति हम सब भारतवासी अपने देश की बचत का ध्यान रखें तो मुझे विश्वास है कि यह महँगाई जल्दी ही समाप्त हो जाए।"

बापू में एक और गुण भी था। वे छोटी-छोटी चीज़ों को भी संभालकर रख लेते थे ताकि आवश्यकता के समय उनका उपयोग किया जा सके। एक बार कोई गोरा उनके पास एक पत्र लेकर आया। पत्र में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक गालियाँ ही गालियाँ लिखी थीं। बापू ने उसे एक नज़र पढ़कर एक ओर रख दिया। परन्तु उसमें लगी पिन को निकालकर अपनी डिबिया में रख लिया।

गोरे ने पूछा—इसे पढ़ लिया आपने ?

तीन वानर थे। एक ने अपने हाथों से अपना मुंह बन्द किया हुआ था। दूसरे ने अपने हाथों से दोनों आंखें बन्द की हुई थीं। तीसरे ने अपने दोनों हाथों की अंगुलियों से कान बन्द किए हुए थे। बापू ने उसे कई बार घुमा-फिराकर देखा और फिर अपने सामने रख लिया।

बापू के पास मिलने वाले आते और उस खिलौने को आश्चर्य से देखते। पर बापू से पूछे कौन ?

एक दिन किसी व्यक्ति ने बातों-बातों मे बापू से प्रश्न किया—बापू, आपका गुरु कौन है ?

बापू ने खिलौने की ओर इशारा करते हुए हंस-कर कहा—ये मेरे गुरु हैं, और मैं इनका शिष्य।

वह आदमी अचम्भित रह गया। बापू ने बन्दरों को गुरु क्यों कहा ? वह यह न समझ सका। उत्सुकता-पूर्वक उसने बापू से पूछा—

"बापू इन वानरों मे क्या विशेषता है ? आपने इन्हें अपना गुरु क्यों कहा ?"

बापू ने खिलौने को उठाया और बोले—"इस वानर को देखो—इसने दोनों हाथों से अपना मुंह बन्द किया हुआ है। यह सिखाता है कि कभी भी किसी को अपने मुंह से बुरा न कहो। इस दूसरे ने अपनी आंखें बन्द की हुई हैं। यह सिखाता है कि कभी कोई

बुरी चीज़ न देखो। इस तीसरे ने अपने कान इसलिए बन्द किये हैं कि कभी कोई बुरी बात न सुनो। इनका यह आदेश बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों के आदेश से बढ़कर है। यदि इन आदेशों का पालन किया जाए तो मनुष्य छल और कपट की दुनियां से कोसों दूर हो जाए। मनुष्य का बुरे से बुरा स्वभाव बदल जाए। इनकी यह शिक्षा मुझे उन्नति का मार्ग दिखाती है। फिर भला मैं इन्हें अपना गुरु क्यों न मानूं ?"

गांधीजी ने इन तीनों बातों का सदा पालन किया। वे दूसरों की बुराइयों की ओर कभी ध्यान नहीं देते थे, और न कभी किसी को निन्दा करते थे। यदि कोई उनकी बुराई करता तो वे उसकी भी परवाह नहीं करते थे।

रघुपति राघव राजाराम
पतित-पावन सीताराम
ईश्वर अल्लाह तेरा नाम
सबको सन्मति दे भगवान्।

बापू के बोल

गांधीजी को प्रतिदिन सैकड़ों पत्र डाक द्वारा आते थे। किसी पत्र में देश की बातों की चर्चा

होती तो किसी में घरेलू बातों की। गांधीजी प्रत्येक पत्र का उत्तर अवश्य देते थे। एक बार उनसे किसी ने पत्र लिखकर यह पूछा कि जीवन को सफल कैसे बनाया जा सकता है ? गांधी ने उसे जो उत्तर दिया वह सोने के अक्षरों में लिखे जाने के योग्य है। गांधीजी ने लिखा कि यदि तुम अपने जीवन में सफल होना चाहते हो तो तुम्हें कुछ नियमों का पालन करना होगा। देखने में ये नियम जितने सरल हैं, उन्हें निभाना उतना सरल नहीं, इसलिए तुम्हे पक्का निश्चय करके इन नियमों का पूरे हृदय से पालन करना चाहिए।

अब नीचे वे नियम दिए जाते हैं जो गांधीजी ने बताए। ये नियम गांधीजी के जीवन भर के अनुभवों का निचोड़ हैं। गांधीजी स्वयं भी इन नियमों का पालन किया करते थे—

१. कम बोलना चाहिए।
२. सुनो सब की, अपनाओ सत्य को ही।
३. जीवन के प्रत्येक क्षण का हिसाब रखो। जिस काम के लिए जो समय निश्चित है, उसमें ही वह काम करो।
४. निर्धनों की भांति सदा जीवन बिताओ। धनी होकर भी धन का अभिमान न करो।

५. पाई-पाई के खर्च का ब्यौरा रखो।

६. केवल अच्छी पुस्तकें पढ़ो। जो पढ़ो उसे विचारो भी।

७. प्रतिदिन नियमपूर्वक व्यायाम करो।

८. डायरी लिखने का अभ्यास बनाओ।

९. अपने स्वभाव को अपने वश में रखो।

१०. प्रतिदिन दोनों समय प्रार्थना अवश्य करो।

प्यारे बच्चो, यदि तुम बड़े होकर कुछ बनना और कुछ करना चाहते हो तो अभी से बापू के बताए इन नियमों पर चलना शुरू कर दो।

• • •

मुद्रक : [illegible] प्रेस, [illegible] शाहदरा [illegible]